डॉ. दीपक सिंह

वर्तमान में राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अम्बिकापुर में सहायक प्राध्यापक हिन्दी के पद पर कार्यरत हैं। शुरुआती शिक्षा गांव से लेने के बाद उन्होंने स्नातक से लेकर पीएचडी तक की अपनी पढ़ाई इलाहाबाद विश्वविद्यालय से की है। अध्ययन-अध्यापन में गहरी रुचि।

डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय

राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अंबिकापुर में हिंदी के असिस्टेंट प्रोफेसर हैं। प्रारंभिक शिक्षा गांव और रीवा से। आगे की पढ़ाई इलाहाबाद विश्वविद्यालय से। जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली से पीएचडी की उपाधि। आदिवासी जीवन के विभिन्न पहलुओं पर कई शोध आलेख प्रकाशित। आदिवासी जीवन और संस्कृति पर गंभीर अध्येता की छवि।

मूल्य : ₹ 350/-

आवरण : नीतिशा कुमार

रुद्रादित्य प्रकाशन
190 एच/आर/3-एन, ओ.पी.एस. नगर, कालिन्दीपुरम,
प्रयागराज (उ.प्र.) पिन-211011 फोन 8187937731

ISBN 978-81-19335-59-6

साहित्य और पर्यावरण
डॉ. दीपक सिंह | डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय

साहित्य और पर्यावरण

संपादक
डॉ. दीपक सिंह
डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय

साहित्य और पर्यावरण

सम्पादक
डॉ. दीपक सिंह
डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय

रुद्रादित्य प्रकाशन
प्रयागराज

ISBN : **978-81-19335-59-6**

RUDRADITYA PRAKASHAN
109, H/R/3-N, O.P.S. Nagar,
Kalindipuram, Prayagraj—211011
Mobille : 8187937731, 8175030339
Email : rudraditya00@gmail.com

Branch : Kaushambi Road, Jhalwa, Prayagraj

Edition : 2023

Price : ₹ 450.00

© Writer

Type Setting : Rudraditya Prakashan D.T.P. Unit

Cover Design : Raj Bhagat

Bhargava Printer

साहित्य और पर्यावरण

भूमिका

प्रकृति से मनुष्य का संबंध द्वंद्वात्मक रहा है। प्रकृति से संघर्ष और उसके संरक्षण के बीच ही मनुष्य ने साहित्य, संगीत व विविध कलाओं का सृजन किया है। लहरों, झरनों, पक्षियों के कलरव के बिना क्या किसी संगीत की कल्पना की जा सकती है? इसी तरह चित्रकला हो या वास्तुकला अथवा भौगोलिक-वैज्ञानिक अनुसन्धान, प्रकृति सबकी मूलाधार रही है। अपनी अस्तित्व रक्षा हेतु एक तरफ हमने प्रकृति से संघर्ष किया तो वहीं दूसरी ओर देवता की तरह उसकी पूजा कर उसके प्रति अपनी कृतज्ञता भी प्रकट की। आज प्रकृति से हमारा यह संबंध विछिन्न हो चुका है।

बीसवीं सदी विकास और पर्यावरण संरक्षण के अंतर्द्वंद्व से संचालित रही है। दुनिया के तमाम विकसित और विकासशील देशों ने आर्थिक उन्नति प्राप्त करने के नाम पर विकास के ऐसे मॉडल को अपनाया जिसमें पर्यावरण का विनाश अनिवार्य था। विकास की इस अवधारणा ने वैज्ञानिकों, पर्यावरणविदों और आम जनमानस की चिंताओं को विकास विरोधी बताकर हाशिये पर डाल दिया है। आज जहाँ हम खड़े हैं वहाँ प्रकृति का अतिशय दोहन प्राणिमात्र का संकट बन चुका है। तमाम जीव-जंतु विलुप्त हो चुके हैं या विलुप्ति के कगार पर हैं। प्रकृति का अपना सफाई कर्मी गिद्ध धरती से गायब हो चुका है। ऋतुक्रम में अनियमितता सामान्य बात हो चुकी है। संसार की अधिकांश नदियों की जैव विविधता, जल की निर्मलता अनियंत्रित विकास की भेंट चढ़ चुकी है। भारत में गंगा नदी इसका ज्वलंत उदहारण है। जब कोई नदी मरती है तो सिर्फ नदी नहीं मरती उसके साथ एक सभ्यता मरती है। बोल्गा से गंगा तक हो या नील से अमेजन तक मनुष्य के फलने-फूलने का इतिहास नदियों से जुड़ा हुआ है।

बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में बड़े पैमाने पर साहित्य का लोकतंत्रीकरण हुआ है। स्त्री, दलित, आदिवासी जैसे हाशिये के स्वरों ने साहित्य में अपनी मजबूत उपस्थिति दर्ज की है। पर्यावरणीय दृष्टि से देखा जाय तो आदिवासी साहित्य ने (आदिवासियों और गैर आदिवासियों द्वारा लिखित) जल-जंगल-जमीन को प्राणिमात्र के अस्तित्व के साथ जोड़कर देखे जाने की व्यापक दृष्टि साहित्य को प्रदान की है। आदिवासी जीवन दर्शन प्रकृति और मनुष्य के बीच संतुलन का शानदार उदहारण प्रस्तुत करता है वह प्रकृति से सिर्फ आवश्यकता भर ग्रहण करने का हिमायती है। प्रकृति उसके स्व में निहित है, वह किसी भी तरह प्रकृति को अन्य नहीं मनाता और न ही मनुष्य की सर्वश्रेष्ठता का पक्षधर है। प्राचीन भारतीय वांग्मय में भी पृथ्वी को माता कह कर उसे चेतन स्वरूप में स्वीकार किया गया है। रवीन्द्र नाथ टैगोर का गीत 'अमार सोनार बांग्ला' प्रकृति के चेतनामय स्वरूप की विराट अभियक्ति है। लालच की सभ्यता ने मनुष्य और प्रकृति के सहयोगी रिश्ते को छिन्न-भिन्न कर मानवता के समक्ष अभूतपूर्व संकट खड़ा कर दिया

है। बीसवीं शदी के तीसरे दशक में ही जयशंकर प्रसाद ने अपनी कालजयी कृति कामायनी के माध्यम से समूची मानवजाति को भोग और विलास की संस्कृति के खतरे के खिलाफ चेतावनी देते हुए प्राकृतिक जीवन-दर्शन की रूप-रेखा हमारे सामने प्रस्तुत की थी लेकिन हमारी सत्ता संरचना ने उसका संज्ञान नहीं लिया—

बधी महावट से नौका थी, सूखे में अब पड़ी रही
उतर चला था वह जल-प्लावन, और निकलने लगी मही
निकल रही थी मर्म वेदना करुण विकल कहानी सी,
वहाँ अकेली प्रकृति सुन रही, हँसती सी पहचानी सी !

अतिशय भोग और लालसा ने ही देव सभ्यता का विनाश किया था। यह त्रासदी ही कही जाएगी कि हमने कामायनी जैसी बौद्धिक उपलब्धि से कुछ नहीं सीखा। साथ ही गाँधी जी द्वारा प्रस्तावित आर्थिक ढांचे और लालच की संस्कृति से बचने के प्रस्ताव को भी विकास के रास्ते में बाधा के रूप में देखा गया। स्थिति यहाँ तक आ पहुंची है कि न हवा साफ बची है न पानी। हमारे पूर्वजों ने कभी सोचा भी नहीं होगा कि एक दिन ऐसा भी आयेगा जब पानी, हवा, बाजार से खरीदे जायेंगे। विकास की तमाम ऊँचाइयाँ लांघ कर भी हम एक तितली का जीवन संरक्षित कर पाने में नाकाम हैं। आज पर्यावरण का जो संकट हमारे सामने खड़ा है वह अतिशय भोग और लालसा की ही उपज है।

प्रकृति से साहित्य का सम्बन्ध हवा-पानी की तरह है। पूरी दुनिया की लोक कथाओं, गीतों और प्रर्थानाओं में प्रकृति विविध रूप में अभिव्यक्त हुई है। प्रकृति की शक्ति, सौन्दर्य गान से शुरू हुई यह यात्रा आज पर्यावरण संकट से रूबरू है। एक युद्ध जैसी स्थिति हर समय हमारे समक्ष बनी हुई है। 'नई कॉलोनी' कविता में दिनेश कुमार शुक्ल लिखते हैं—

'अरावली पर्वतमाला फिर हार मानकर
आज और कुछ ज़्यादा पीछे खिसक गयी है
भय से आँखें बन्द किये मैं देख रहा हूँ
इन्द्रप्रस्थ के पास खांडव-वन को खाता
छिड़ा हुआ इक घमासान है–
जिसमें धरती हार रही है'

धरती की हार प्राणी-मात्र की हार होगी। धरती के संघर्ष में हम सभी को भागीदार बनना होगा और लौटना होगा प्रकृति की ओर। प्रस्तुत पुस्तक 16-17 मार्च 2023 को राजीवगांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अंबिकापुर में 'साहित्य और पर्यावरण' विषय पर आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार में पढ़े गए पर्चों का संकलन है। उम्मीद है कि पुस्तकाकार रूप में यह पर्यावरणीय सरोकारों को बढाने और हिन्दी क्षेत्र में एक सार्थक बहस को संचालित करने में मददगार होगी।

●●●

अनुक्रम

भूमिका **5**

1. आदिवासी साहित्य और प्रकृति का सह-अस्तित्व —डॉ. विश्वासी एक्का 9
2. मनुष्य का जीवन और पारिस्थितिकी तंत्र —नीलाभ कुमार 15
3. समकालीन साहित्य में पर्यावरणीय चिन्तन —डॉ. के. आशा 22
4. लोक गीतों में प्रकृति के विविध रूप —अजय कुमार तिवारी 26
5. डॉ. श्यामसुन्दर दुबे के साहित्य में पर्यावरणीय चिन्तन —जीतन राम पैकरा 34
6. केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में प्रकृति एवं खेती-किसानी —डॉ. बृजेश कुमार पाण्डेय 45
7. Climate Change and Water Crisis in Eco-films *Kadvi Hawa* and *Turtle* —Dr. Bhanupriya Rohila 51
8. Ecocritical Reading of Literature : Understanding the Silencing of Nature —Dr. R.P. Singh 60
9. टिकाऊ कृषि तंत्र एवं स्मार्ट कृषि-एक सैद्धांतिक विश्लेषण —डॉ. अनिल कुमार सिन्हा, दीपिका स्वर्णकार 68
10. पर्यावरण व पारिस्थितिकी का स्वरूप एवं अंतःसंबंध —वी सुगुणा 81
11. राजस्थानी चित्रकला में प्रकृति —कमल किशोर कश्यप 88
12. साहित्य में पर्यावरण संरक्षण एवं संचेतना : एस आर हरनोट —संजीव कुमार मौर्य 92
13. पर्यावरण व गहन पारिस्थितिकी : गाँधी एवं अंबेडकर की नजर से —गोपाल 104
14. बोधकथा साहित्य एवं पर्यावरण चिंतन —सुशील कुमार तिवारी 112
15. यह नरम-हरा-कच्चा संसार —ऋचा वर्मा 122
16. मानव और प्रकृति का अंतर्संबंध तथा समकालीन हिंदी उपन्यास —प्रियंका जायसवाल, डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय 129
17. हिंदी उपन्यासों में व्यक्त पर्यावरणीय प्रदूषण एवं खतरे —अक्षतानंद पाण्डेय 135
18. प्राकृतिक संसाधन का दोहन और पर्यावरणीय संकट —डॉ. क्रेसेन्सिया टोप्पो, डॉ. सुशील कुमार टोप्पो 142
19. पर्यावरण संरक्षण : हड़प्पा और वैदिक सभ्यता —डॉ. अजय पाल सिंह 147
20. आदिवासी साहित्य में जल-जंगल और जमीन का संघर्ष —डॉ. कुसुम माधुरी टोप्पो 150
21. कालिदास के साहित्य में पर्यावरण रक्षा के उपाय —राजीव कुमार 157

22. फाँस उपन्यास में अभिव्यक्त पर्यावरण संकट और किसान जीवन —श्रीमती स्नेहलता खलखो, डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय 163
23. महाकवि कालिदास के काव्यों में प्रकृति का स्वरूप —महेश कुमार अलेंद्र 170
24. आदिवासी कविता में पर्यावरण चिंतन —मनोरमा पाण्डेय 181
25. छत्तीसगढ़ी उपन्यास 'पखरा ले उठे आगी' में व्यक्त प्रकृति और संस्कृति का समन्वय —डॉ. (श्रीमती) अलका पंत, श्रीमती वंदना रानी खाख़ा. 189
26. हिंदी साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण : विजय राठौर के काव्य के संदर्भ में —गोवर्धन प्रसाद सूर्यवंशी, डॉ. पुनीत कुमार राय 197
27. ऋषि दयानंद के साहित्य में पर्यावरण चिंतन —डॉ. अजय आर्य 208
28. भारत में पूँजीवाद और जलवायु संकट —धवल गुप्ता 214
29. पर्यावरण एवं राजनीतिक चिंतन —मुकेश कुमार सिंह 220
30. प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन —डॉ. कमलेश दुबे 225
31. आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल में प्रकृति —कसीरा जहाँ 234
32. छायावादीयों कवियों के काव्य में प्रकृति चित्रण-निराला के संदर्भ में —शिवशंकर राजवाड़े 243
33. सत्यभामा आडिल की आधुनिक कविताओं में प्रकृति —सीमा मिश्रा 250
34. पर्यावरण संरक्षण में समकालीन हिन्दी साहित्य एवं मीडिया की भूमिका —रश्मि पाण्डेय 254
35. आधुनिक काल में प्रकृति —प्रियंका मिश्रा 260
36. मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में प्रकृति —अफीफा फातिमा शेक, डॉ. पूर्णिमा श्रीनिवासन 270
37. डॉ. माणिक विश्वकर्मा 'नवरंग' का रचना संसार और प्रकृति के विविध रंग —श्रीमती संगीता शर्मा 275
38. प्रेमचंद की कहानियों में प्रकृति वर्णन—सतीश कुमार धीवर 287
39. आदिवासी साहित्य में जल, जंगल और जमीन का संघर्ष —कल्पना सिदार 293
40. अज्ञेय के काव्य में प्रकृति —ज्योति कमल 299
41. मंगलेश डबराल की कविताओं में जल, जंगल और ज़मीन —श्रीमती रामेश्वरी दास 306
42. गांधीवादी दर्शन और पर्यावरण संरक्षण —श्रीमती निशा शर्मा 314
43. तुलसीदास के काव्य में प्रकृति चित्रण —नेहा विश्वकर्मा 319
44. Ecopoetry and Sustainable Development —Dr. Nidhi Mishra 324
45. Conservation of some Medicinal Plants in Balrampur, C.G. —Laxmi Singh 330
46. पर्यावरण असंतुलन : 'जहाँ बाँस फूलते हैं' उपन्यास के सन्दर्भ में —लक्ष्मी के. एस. 337

●●●

आदिवासी साहित्य और प्रकृति का सह-अस्तित्व

डॉ. विश्वासी एक्का

सहायक प्राध्यापक-हिन्दी

राजमोहिनी देवी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अम्बिकापुर

आदिवासी लेखन, उल्लास और प्रतिरोध के साहित्य के साथ-साथ प्रकृति के साथ सहअस्तित्व का भी साहित्य है। आदिवासी साहित्य लेखन में गैर आदिवासी समाज से संबंध रखने वाले साहित्यकार हैं तो आदिवासी समाज से आनेवाले साहित्यकार भी साहित्य सृजन कर रहे हैं। दूसरे वर्ग से आनेवाले साहित्यकारों की कृतियां इसलिए महत्वपूर्ण हैं कि उसमें विषय वस्तु की गहरी समझ दिखाई देती है जिससे पाठकों में विश्वास पुख्ता होता है। पाठकीय रुचि जागृत होती है। मानव ही नहीं मानवेतर जगत से सहअस्तित्व ही जीवन का आधार है यह आदिवासी साहित्यकार समझता है। अतः उनके साहित्य में सह-अस्तित्व का भाव दृष्टिगोचर होता है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य आदिवासी साहित्य में मानव और प्रकृति के सहजीविता की पहचान के साथ सम्पूर्ण मानव जाति में सह-अस्तित्व की भावना का विकास करना है। उनमें प्रकृति के संरक्षण और संवर्धन का भाव जागृत करना है। मानव और मानवेतर जगत की पारस्परिकता से ही जीवन का विकास होता है।

प्रकृति के साथ छेड़छाड़, घटते जंगल, प्रदूषित होती नदियाँ, विलुप्त होती जीव प्रजातियां, जलवायु परिवर्तन केवल आदिवासियों के अस्तित्व का संकट नहीं वरन सम्पूर्ण मानवता और मानवेतर प्राणी जगत के लिए भी खतरा है। आदिवासी साहित्य इस खतरे की बात करता है, उसकी चिंता प्रकृति को अपने वास्तविक रूप में बनाये रखने की है, यह तभी संभव होगा जब मानव और मानवेतर जगत के बीच सहअस्तित्व का भाव हो।

आदिवासी जनजीवन पर केन्द्रित साहित्य एक विशिष्ट साहित्य है, उसकी एक विशिष्ट पहचान ही साहित्य की विभिन्न विधाओं को रूपायित कर रहा है। अलिखित वाचिक परम्परा को स्रोत बनाये हुए आदिवासी साहित्यकारों ने साहित्य लेखन की शुरूआत की।

पहलुओं को उजागर करते हैं। रणेन्द्र के उपन्यास ''गायब होता देश'' में उन्होंने झारखण्ड के मुंडा आदिवासियों के संकटों को लिखा है। रणेन्द्र जी ने लिखा है— ''इन्हें कौन रोकेगा ? अपने जनतंत्र में तो ऐसे बड़े देवताओं की पूछ है, सब पावर और पैसे के पीछे भागते हैं। हरहाल में वर्चस्व और किसी भी तरीके से सम्पदा को यूरोपीय मंत्र हमारे लोगों के जीवन भी लक्ष्य बनाया गया है।'' आगे पुनः लिखते हैं— क्या मुसीबत है कल बांध बनाकर हमारे गाँवों जंगलों को डुबोया, हमारे खेत, खलिहान झरना-मसना सब मीलों तक के सरजोर साखू डूब गए। अब बांध तोड़कर सब डुबाने की योजना है। रणेन्द्र ने ''ग्लोबल गाँव के देवता'' उपन्यास में भी आदिवासी जीवन के त्रासदी की दास्तान लिखी है।

संजीव का उपन्यास ''पांव तले की दूब'' भी आदिवासियों पर हो रहे अन्याय, शोषण, अत्याचार, कर्मचारी, ठेकेदारों, पुलिस वालों की लूट की कहानी है। वीरेन्द्र का उपन्यास ''पार'' मध्यप्रदेश के आदिवासी अंचल बोतवा के विशाल बाँध परियोजना के विस्थापितों की लड़ाई और संघर्ष को व्यक्त करता है। बुंदेखलखण्ड का एक गाँव किस तरह बांध निर्माण से विकास के चपेट में डूब जाता है।

भारत में उदारीकरण नीति के बाद शासन प्रशासन और बड़े-बड़े पूँजीपतियों, उद्योगपतियों द्वारा विकास के नये स्वरूप ने सबसे पहले आदिवासी इलाकों व जनजीवन को अपने चपेट में लिया। उनके जल जंगल जमीन छीनकर नैसर्गिक प्रकृति पर खिलावाड़ कर उन्हें उनकी मूलभूत आवशयकताओं से बेदखल किया है।

संदर्भ :

1. आदिवासी अधिकार—ग्लैडसन डुंगडुंग—आदिवासी पब्लिकेशन कोकर रांची।
2. वाचिकता आदिवासी दर्शन साहित्य और सौन्दर्य बोध, वंदना टेटे, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली।
3. मौसम तो बदलना ही था, विश्वासी एक्का, रश्मि, प्रकाशन लखनऊ।
4. जंगल पहाड के पाठ महादेव टोप्पो अनुज्ञा प्रकाशन दिल्ली।
5. लोकप्रिय आदिवासी कविताएं, वंदना टेटे–प्रभात प्रकाशन।
6. लोकप्रिय आदिवासी कहानियां- वंदना टेटे, प्रभात प्रकाशन।
7. गायब होता देश—रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ।
8. ग्लोबल गाँव का देवता—रणेन्द्र पेगुइन बुक्स लंदन।
9. छत्तीसगढ़ मित्र साहित्य और विचार का मासिक अप्रैल 2022।

■

कालिदास के साहित्य में पर्यावरण रक्षा के उपाय

राजीव कुमार
विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग
राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अंबिकापुर (छ.ग.)

कालिदास का साहित्य

कालिदास के व्यक्तित्व व कृतित्व पर विद्वानों के बीच मतभेद हैं। छोटी-बड़ी कुल लगभग चालीस रचनाएँ हैं जिन्हें अलग-अलग विद्वानों ने कालिदास की रचना माना है। निर्विवाद रूप से सात रचनाओं को कालिदास की रचना माना गया है। इनमें तीन नाटकः अभिज्ञान शाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम् और मालविकाग्निमित्रम्; दो महाकाव्यः रघुवंशम् और कुमारसंभवम्; और दो खण्डकाव्यः मेघदूतम् और ऋतुसंहार हैं।

कालिदास के नाटकों का अंग्रेजी के अलावा जर्मनी में भी अनुवाद किया गया है। कालिदास की रचनाएँ विश्व भर में आदर प्राप्त कर रहीं है। कुमारसंभवम् और रघुवंशम् महाकाव्यों को भी अप्रतिम ख्याति मिली है। खंडकाव्य में मेघदूत प्रमुख है। मेघदूत के दो भाग हैं—पूर्वमेघ एवं उत्तरमेघ ऋतुसंहारम् में सभी ऋतुओं में प्रकृति के आकर्षक एवं विविध रूपों का वर्णन किया गया है। कालिदास का वर्णन अद्भुत और जीवंत है। कालिदास के उपमा कौशल को अनुपमेय कहा गया है—उपमा कालिदासस्य।

कालिदास का प्रकृति वर्णन

संस्कृत साहित्य में कालिदास का नाम अमर है। कालिदास की उपमाओं को अद्वितीय कहा गया है। कालिदास का वर्णन सजीव और प्रकृति के निकट है। वे प्रकृति को सजीव रूप में वर्णन करते हैं।

डॉ. मोहम्मद इसराइल खां लिखते हैं—

लौकिक संस्कृत साहित्य में अन्य कवियों की अपेक्षा कालिदास ने अपनी कृतियों में प्रकृति को एक विशेष महत्व दिया है। उन्होंने प्रकृति को मानव का एक अभिन्न अंग माना है। यही कारण है कि हम कवि की कृतियों में प्रकृति को मनुष्य के दुखों में दुखी तथा सुख

में सुखी पाते हैं। अभिज्ञान शाकुंतलम् में हमें अनेक ऐसे स्थल मिलते हैं, जहाँ कवि ने यह दिखाया है कि प्रकृति शकुंतला के दुख में मानव के समान दुखी है तथा सुख में सुखी है।

कालिदास की कृतियों के अध्ययन के आधार पर यदि वनस्पति जगत का चित्र खींचना चाहें तब हमें ऐसा प्रतीत होगा कि वहाँ प्रकृति के अतिरिक्त कुछ नहीं है। कवि की दृष्टि प्रकृति के सूक्ष्म तत्वों से लेकर स्थूल तत्वों के निरूपण तथा तत्वतः वर्णन में पैनी दिखाई देती है। उन्होंने अपने ग्रंथों में कुश कंटक घास दूर्वा आदि छोटी से छोटी वनस्पतियों से लेकर लताओं, वृक्षों, फलों आदि का सचिव चित्र खींचा है।[1]

अभिज्ञान शाकुंतलम् में प्रकृति के दुखी होने की स्थिति में यह अव्यक्त सन्देश छिपा हुआ महसूस होता है कि हमारे सुख दुःख का आधार प्रकृति है। इसलिए हम सभी को प्रकृति के सुख को संजोने की चेष्टा करनी चाहिए।

कालिदास के ग्रंथों में प्रकृति का चित्रण अद्भुत है। वे प्रकृति को मातृ रूप में देखते हैं। इस दृष्टि से प्रकृति को मनुष्य के जीवन का आधार माना गया है। ऋतुसंहार में कवि कालिदास ने प्रकृति का सजीव चित्रण किया है। कालिदास ने प्रकृति की बाहरी तथा आतंरिक दोनों ही स्वरूपों का वर्णन किया है। प्रकृति के मनोवैज्ञानिक प्रभाव को भी उनके ग्रंथों में स्वीकार किया गया है। मानव के स्वभाव की व्याख्या करने के लिए भी वे प्रकृति का सहारा लेते हैं। ऋतुसंहार में प्रकृति का अद्भुत चित्रण है। ग्रीष्म ऋतु का चित्र खींचते हुए वे कहते हैं—

प्रचण्डसूर्यः स्पृहणीयचन्द्रमाः सदावगाहक्षतवारिसञ्चयः।
दिनांतरम्योस्म्युपशांतमन्मथों निदाद्यकालोस्यमुपागतः प्रिये।[2]

गर्मी सूर्य की प्रचंडता को बढ़ा देती है। स्नान करने से संचित जल समाप्त हो जाता है। चन्द्रमा की प्रतीक्षा होती है।कामभाव तिरोहित होने लगता है। प्रकृति और उसके प्रभाव को सूक्ष्म तथा स्पष्ट दृष्टि देने में कालिदास सिद्धहस्त हैं।

वर्षा या मेघ के प्रभाव का वर्णन कालिदास ने बहुत ही अनूठे ढंग से किया है। वे लिखते हैं कि मेघ को देख लेने पर तो सुखी अर्थात संयोगी जनों का चित्त कुछ का कुछ हो जाता है फिर वियोगी लोगों का क्या कहना।

मेघालोके भवति सुखिनोस्प्यन्यथावृत्ति चेतः।
कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे।।[3]

रघुवंश महाकाव्य में कालिदास ने प्रकृति को एक शिक्षक या आदर्श के रूप में भी रेखांकित किया है। वे जल के स्वभाव से सीख लेने को प्रेरित करते हैं। जल तो स्वभाव से शीतल है, गर्म वस्तु के सम्पर्क से भले ही कुछ समय के लिए जल में गर्मी उत्पन्न हो

जाती है किन्तु समय पाकर वह शांत भी हो जाती है। इसी प्रकार महात्मा भी प्रकृति से क्षमाशील होते हैं, अपराध करने पर वे कुछ क्षण के लिए ही उद्विग्न होते हैं, फिर उनका शांत स्वभाव लौट आता है।[4]

मेघ और चातक के उदाहरण से कवि कालिदास बहुत ही अद्भुत सीख प्रस्तुत करते हैं। सज्जन पुरुष स्वाभाव से करुणाशील होता है। सज्जनों का कारुण्य इस बात की प्रतीक्षा नहीं करता कि कोई गिड़गिड़ायेगा तभी मैं उसकी सहायता करूँगा। सज्जन का स्वभाव, मेघ या कृष्ण सा होता, जो बिन माँगे सहायता तथा दान के लिए प्रस्तुत रहता है।

निःशब्दोस्पि प्रदिशसि जलं याचितश्चातकेभ्यः।
प्रत्युक्त हि प्रणयिषु सतामीप्सितार्थक्रियैवा।।[5]

अभिज्ञान शाकुंतलम् के 1/13 में आश्रम का अद्भुत वर्णन किया गया है। यहाँ आश्रम के लक्षणों का वर्णन करते हुए धान, तोते, घोसले, पक्षी, मृग आदि की चर्चा की गई है। यह बताया गया है कि मृगों को यह विश्वास है कि उन्हें कोई नहीं मारेगा। शकुंतला के विदा होने पर मोरों का नाचना छोड़ देना और प्रकृति का उदास हो जाना यह बताता है कि प्रकृति के साथ मनुष्य का तादात्म्य संबंध हो सकता है। मेघदूतम में एक प्रेमी प्रकृति को आधार बनाकर अपना संदेश भेजता है। यह वर्णन अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य और प्रकृति के बीच के संबंध को उजागर करता है। व्यक्ति दुख और विरह में प्रकृति के सानिध्य या सानिध्य में आश्रय प्राप्त करता है। या यह कहें कि प्रकृति के प्रेम में व्यक्ति जब डूबता है तो उसका दुख तिरोहित हो जाता है। संस्कृत शोध लेखमाला में मेघदूत का शिल्प और संवेदन पर चर्चा करते हुए लिखा है—

कालिदास ने मेघ के मार्ग में नदियों एवं पर्वतों को दिखाया है। कवियों की उक्ति में सागर को नदियों का पति माना गया है। सागर आत्मा का प्रतीक है। कालिदास की दृष्टि में नदियों एवं नेक का क्या संबंध रहा होगा वह यहाँ विचारणीय है। जल को जीवन कहा गया है। नदियाँ बादलों से जल पाकर बहने लगती हैं तथा जल के अभाव में भी सूख जाती हैं, अतएव मेघ से जल पाने का तात्पर्य जीवन पाना है तथा जो पानी देने वाला मेघ है वह जीवन का दाता बनता हुआ आत्मा या ब्रह्म का प्रतीक है।[6]

प्रकृति और जीवन की घनिष्ठता को कालिदास ने वर्षा के प्रभाव से इंगित करने का प्रयास किया है। वर्षा का न केवल जड़ जगत पर अपितु चेतन जगत पर भी प्रभाव पड़ता है। कवि इसका वर्णन करते हुए लिखते हैं—जल बरसने के कारण पुष्पित कदम्ब को भ्रमर मस्त होकर देखते हैं, प्रथम जल पाकर मुकुलित कन्दली को हरिण खा रहे होंगे तथा हाथी प्रथम वर्षाजल के कारण पृथ्वी से निकलने वाली गन्ध सूँघ रहे होंगे—इस प्रकार भिन्न-भिन्न

क्रियाओं को देखकर मेघ के गमन मार्ग का स्वतः अनुमान हो जाता है। प्रकृति मनुष्य के साथ जुडी हुई है। प्रकृति का मानव के साथ साथ सम्पूर्ण जगत पर प्रभाव पड़ता है—

नीपं दृष्ट्वा हरितकपिशं केसरैरर्द्धरूढै-
राविर्भूतप्रथममुकुलाः कन्दलीश्चानकच्छम्।
जग्ध्वारण्येष्वधिकसुरभिं गन्धमाघ्राय चोर्व्याः।
सारठास्ते जललवमुचः सूचयिष्यंति मार्गम।।[7]

कालिदास ने कुमार संभव में हिमालय का वर्णन किया है—

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पुर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।[8]

इसमें हिमालय को 'देवतात्मा' 'नागाधिराज' कहते हुए कवि ने पृथ्वी का मानदण्ड भी कहा है। देवतात्मा कहकर हिमालय की जीवनदायिनी संजीवनी शक्ति की ओर इशारा किया है। पर्वतराज कहकर उसकी विशालता और विराटता को प्रकट किया है। मानदण्ड को मेरुदंड के रूप में भी स्वीकार किया जा सकता है। वैज्ञानिक दृष्टि से ग्लोबल वार्मिंग और उसके प्रभाव को देखते हुए वैज्ञानिक आज हिमालय के आकार को घटता हुआ देखकर चिंतित हैं। उनका मानना है कि हिमालय के बिना जीवन असंभव है।[9]

कालिदास के साहित्य में प्रकृति के नए नए रूपों का वर्णन है। प्रकृति और मनुष्य के बीच के संबंध को कालिदास ने एक नई दृष्टि दी है। मनुष्य का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य प्रकृति से जुड़ा हुआ है। इसलिए हम सभी को प्रकृति से जुड़े रहने का प्रयास करना चाहिए। जैसे बचा हुआ धर्म बचाने वाले को बचाता है वैसे ही बची हुई प्रकृति हमारी रक्षा करती है।[10]

कालिदास के साहित्य में प्रकृति एक जीवंत सत्ता की तरह अनुभूत होती है। नदी नाले पर्वत और विशेष रूप से हिमालय का वर्णन पढ़ने वाले को किसी अदृश्य लोक तक ले जाने का सामर्थ्य रखता है। इसीलिए रघुवंश महाकाव्य के मंगलाचरण में उन्होंने शब्द के सामर्थ्य का वर्णन करते हुए शब्द और अर्थ के सम्बन्ध को भगवान् शिव और माता पार्वती की तरह जुडा हुआ देखा है—वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।

जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।[11]

वाणी और अर्थ जैसे अलग अलग होते हुए भी एक ही हैं उसी प्रकार पार्वती और शिव भिन्न-भिन्न होते हुए भी वस्तुतः एक ही हैं। वाणी और अर्थ सदैव एक दूसरे से सम्पृक्त अर्थात जुड़े रहते हैं। जैसे वाणी और अर्थ जुड़े हैं वैसे ही शिव और पार्वती भी अभिन्न हैं।

उपसंहार

कालिदास प्रकृति को जीवंत मानने वाले कवि हैं। वे मानते हैं कि जीवन प्रकृति का दूसरा रूप है। मन की शांति और स्थिरता के लिए प्रकृति का सान्निध्य आवश्यक है। स्वयं की रक्षा के लिए प्रकृति की रक्षा आवश्यक है। जीवन जीव जगत को कालिदास ने प्रकृति से अलग नहीं माना है। जीवन में उल्लास आनंद प्रेम का आधार भी वे प्रकृति को मानते हैं। प्रकृति के खत्म हो जाने पर जीवन का आनंद खत्म हो जाएगा। कालिदास की रचनाओं को पढ़ने से यह आभास होता है कि प्रकृति सिर्फ वह नहीं है जो आंखों से दिखाई देती है। प्रकृति का स्थूल रूप हमें दिखाई देता है। सूक्ष्म रूप दिखाई नहीं देता। जैसे सर्दी गर्मी को देखकर नहीं अपितु अनुभव के आधार पर जाना जाता है। वैसे ही प्रकृति के अनेक तत्व अनुभव से ही जाने जा सकते हैं। प्रकृति का मानवीकरण करके अपने ग्रंथों में कवि ने यह बताने का प्रयास किया है कि प्रकृति के सुख-दुख को हमें महसूस करना चाहिए। अन्यथा वह दिन दूर नहीं जब दीपशिखा[12] की तरह प्रकृति के प्रकाश के ओझल होते ही दुनिया अंधकार में डूब जाएगी। कालिदास के ग्रंथों को पढने से सार रूप में यही समझ में आता है कि प्रकृति के साथ जीने का अभ्यास ही प्रकृति की रक्षा का उपाय है। रघुकुल की रीति समझाते समझाते कवि हम सबको प्रकृति के अतिदोहन से बचने की सलाह भी देते हैं। रघुवंश में उन्होंने कर प्रणाली को समझाने के लिए उदाहरण दिया है—प्रजा के क्षेम के लिये ही वह राजा दिलीप उन से कर लेता था, जैसे कि सहस्त्रगुना बरसाने के लिये ही सूर्य जल लेता है।

सहस्त्रगुणमुत्स्त्रष्टुम् आदत्ते हि रसं रविः।।[13]

वैदिक वचनों का अनुसरण करते हुए कहा जा सकता है—नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।[14]

प्रकृति की शरण के बिना जीवन का आह्लाद कहीं नहीं है।

सन्दर्भ :

1. संस्कृत शोध लेखमाला पृष्ठ 59
2. ऋतुसंहार 1.1
3. मेघदूत 1.3
4. रघुवंश 5.54
5. कुमार संभव 2.57
6. डॉ मोहम्मद इसराइल खां कृत संस्कृत शोध लेखमाला पृष्ठ 59-60
7. पूर्व मेघ 21

8. कुमार संभव 1/1
9. हिमालय डिस्कवरी ऑफ़ इण्डिया का एक कार्यक्रम
10. धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः
11. मनुस्मृति
12. रघुवंश के इन्दुमती स्वयंवर में इन्दुमती की दीपशिखा से दी गयी उपमा इतनी प्रसिद्ध हो गयी कि कवि का नाम ही 'दीपशिखा-कालिदास' पड़ गया। इन्दुमती जिन-जिन राजाओं को छोड़कर आगे बढ़ती जाती थी, उनका मुँह उदास पड़ता जाता था जैसे राजमार्ग के वे-वे भवन जो दीपक के आगे बढ़ जाने पर धुँधले पड़ते जाते हैं।
    संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा
    नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।। रघुवंश 6.67।
13. रघुवंश 1/18
14. वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
    तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।।
    (यजु0 31/18)
    अर्थात्, मैं उस प्रभु को जानूँ जो सबसे महान् है, जो करोड़ों सूर्यों के समान देदीप्यमान है, जिसमें अविद्या और अन्धकार का लेश भी नहीं है। उसी परमात्मा को जानकर मनुष्य दुःखों से, संसाररुपी मृत्यु-सागर से पार उतरता है, मोक्ष-प्राप्ति का और कोई उपाय नहीं है।

■

फाँस उपन्यास में अभिव्यक्त पर्यावरण संकट और किसान जीवन

श्रीमती स्नेहलता खलखो
शोधार्थी सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
शास. श्यामा प्रसाद मुखर्जी महाविद्यालय
सीतापुर जिला सरगुजा (छ.ग.)
डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय
शोध निर्देशक एवं अस्सिटेंट प्रोफेसर (हिन्दी)
राजीव गाँधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अंबिकापुर (छ.ग.)

पर्यावरण संकट और किसान जीवन में मैंने संजीव कृत उपन्यास 'फाँस' को लिया है। फाँस उपन्यास महाराष्ट्र यवतमाल जिला बनगाँव का है। परंतु उपन्यास पठन के दौरान ऐसा प्रतीत होता है, यह घटना विदर्भ, आंध्रप्रदेश व कर्नाटक के किसान जीवन से लेकर भारतवर्ष के विभिन्न क्षेत्रों के किसानों की घटनाओं से जुडा है। बनगाँव जैसा कोई भी गाँव होगा जो आधा वन होगा, आधा गाँव, आधा गीला, आधा सूखा, बनगाँव के पूरब देखो तो जंगल शुरू होने लगता है, पश्चिम देखो तो पठार। कभी-कभी तो पूरब में पानी पड़ रहा होता है और पश्चिम में नहीं, सो बारिश से बचने के लिये बकरियाँ, गाय-भैंस, लोग-बाग भागकर पश्चिम आ खडे होते हैं। वैसे बारिश का क्या है, बरसी तो बरसी नहीं तो नहीं बरसी। गाँव की बस्ती मिश्रित है यहाँ ब्राह्मण, राजपूत, कुछ एक मराठा परिवार, चमरा, कुनबियाँ, मांस, मछुआरा, आदिवासी वर्ग रहते हैं। इसी गाँव का एक किसान है जिसका नाम शिवशंकर और उसकी पत्नी शकुंतला से कहानी प्रारंभ होती है। गाँव के लोगों का प्रमुख व्यवसाय खेती है। जंगल की संपति भी उनकी उपजीविका का जरिया है। हमारा भारत एक कृषि प्रधान देश है। किसान के लिये खेती व्यवसाय नहीं, बल्कि जीवन जीने का तरीका है। खेती के साथ किसानों का रक्त संबंध का रिश्ता है। किसानीपन उनके खून में है। माँ के साथ बच्चे का जो रिश्ता होता है, वही संबंध किसान का जमीन के साथ है। वह खेती